Knowledge Consortium of Gujarat
Department of Higher Education - Government of Gujarat
Journal of Humanity
ISSN: 2279-0233
Continuous issue-25 | June – July 2016

"भगवदज्जुकीयम" मे प्रयुक्त 'अपि' निपात के अर्थघटन।

भाषा में निपातो के स्वरुप, संख्या और अर्थघटन के विषय मे अनेक मतमतांतर देखे जाते है। कई प्राचीन ग्रन्थो में निपात की गणना एक स्वतंत्र पद के स्वरुप में की गई है। निपातो के लक्षण देते हुए निरुक्तकार कहते है 'अथ निपाता उच्चावच्चेष्वथेषु निपन्तीति।'[1] आचार्य दुर्ग के मत मे, 'उच्चावच्चेषु अर्थेषु निपन्तीति निपाताः।'[2] आचार्य सायण भी निपात का लक्षण देते है की 'नितरां पातः इति निपातः।'[3] इस ही तरह निपातो की संख्या और वर्गीकरण के विषय में भी मतमतांतर है । आचार्य पाणिनि ने 'प्रागरिश्वरान्निपाताः। (१-४-५६ अष्टाध्यायी)' सूत्र से निपातसंज्ञा के अंतर्गत १९५ जितने निपातो की गणना की है।[4] आचार्य यास्क ने भी निरुक्त मे अध्याय-१ अंतर्गत २,३ और ४ पाद मे २४ जितने निपातो की यादी दी है। इस तरह उक्त विवेचन से यह स्पष्ट है की निपातो की संख्या, स्वरुप ओर अर्थघटन के विषय मे कोई एक मत अंतिम नहि माना जा सकता। निपातो का प्रयोग वैदिक साहित्य मे ज्यादातर पादपूरक अवयव के रुप मे देखा जाता है, परतुं लौकिक साहित्य मे निपात किसी ना किसी अर्थ को उजागर करते देखे जाते ह। इस संदर्भ मे प्रस्तुत शोधलेख मे बोधायन कवि द्वारा विरचित "भगवदज्जुकीयम" कृति मे प्रयुक्त 'अपि' निपात के अर्थघटन करने का उपक्रम किया गया है। इस संदभ मे अर्थघटन करने के लिए अमरकोष,आप्टकोष और निरुक्त की भी सहायता ली गई है। ओर प्रस्तुत कृति पर लिखी गई दिङ्मात्रदर्शिनी व्याख्या की सहाय भी ली गई है।

'भगवदज्जुकीयम' मे अपि निपात संख्यात्मक द्रष्टि से ३१ बार प्रयुक्त हुआ है। इस निपात को शाण्डिल्य ने १० बार यानी सबसे अधिक बार प्रयुक्त किया है। इसके बाद अनुक्रम से परिव्राजक-८ गणिका-७ और चेटी (मधुकरिका), यमपुरुष, रामिलक, विदूषक, वैद्य, सूत्रधार न १-१ बार इस निपात का प्रयोग किया है।

अपि निपात अनेकार्थ है। ज्यादातर यह निपात समुच्चय अर्थ मे ही प्रयुक्त होता है।[5] भगवदज्जुकीयम मे भी अपि निपात १५ बार समुच्चयार्थ मे प्रयुक्त हुआ है। जिसे सबसे प्रथम बार शाण्डिल्य ने उपयोग किया है। कृति के आंरभ मे परिव्राजक का अनुसरण करते हुए शाण्डिल्य खुद का शाक्यश्रमणक और परिव्राजक के शिष्य बनने का वृतांत कहते हुए 'अपि' निपात इस तरह उपयोग करता है।- 'ततस्तस्मिन दास्याः पुत्राणामेककालभक्तत्वेन बुभुक्षितस्तमपि विसृज्य चीवरं छित्वा पात्रं प्रतोल्य छत्रमात्रं गृहीत्वा निर्गतोस्मि।' (पृष्ठ- ५०)

यहा शाण्डिल्य अपना जन्म बाह्मण कुल मे होने की बात करता है। पर घर मे अनन का अभाव होने के कारण वह शाक्यश्रमणक बना। किन्तु वहा भी दिन मे एक ही बार भोजन लेना होता था। इतनी बात कहकर शाण्डिल्य आगे के वृतांत को कहत हुए 'अपि' निपात का सम्मुचय अर्थ मे प्रयोग करता है की किस तरह वह ब्राह्मण से शाक्यश्रमणक ओर शाक्यश्रमणक से परिव्राजक का शिष्य बना। कृति मे समुच्चय अर्थ मे 'अपि' निपात के प्रयोग के अन्य उदाहरण नीचे दीए गए है।

१ परिव्राजकः - अधीताध्ययनैरपि कालान्तर विज्ञेया भवन्त्यध्यनार्थाः।(पृष्ठ-७५)

२ परिव्राजकः - मा मैवम। महात्मभिः सेवितपूजितं द्विजैः सुरासुराणामपि बुध्दिसंमतम। (पृष्ठ- ७७)
३ चेटी - सुष्ठु अज्जुका भणति। आसव एव गोष्ठी, यो मदयति हासयति लज्जाधीरमपि स्त्रीजनम। (पृष्ठ- ८२)
४ तिष्ठति सहकारशरो मुह्यति नूनं मनोपि मुनेः। (पृष्ठ-८४)
५ शाण्डिल्यः - प्रसङ्गमपि सांप्रत करिष्यसि, यद्यस्य कार्षणिकाः भवयुः। (पृष्ठ-८६)
६ तषामपि प्रीतिपराङ्गमुखानां गुणष्वपेक्षां हृदयं करोति। (पृष्ठ-९४)
७ अपि योगिनामिह मनो विध्यति फुल्लैरशोकशरेः। (पृष्ठ-८५)
८ शाण्डिल्यः - आ। आकुलितोऽस्मि। शीष पादमपि न जानामि। (पृष्ठ-९६)
९ शाण्डिल्यः - आ। अपेहि निस्नेह। मामपि त्वामिव तर्कयसि। (पृष्ठ-९७)
१० हा एवं बहु जानन्तेऽपि म्रियन्ते। (पृष्ठ-९९)
११ वैद्यः - अयि। पितमप्यस्ति। (पृष्ठ-१०४)
१२ गणिका- मुर्ख। वैद्य। वृथावृध्द। प्राजिनामन्तकमपि न जानीषे। (पृष्ठ-१०८)
१३ सप्तविषवेगादतिकान्तोऽश्विभ्यामपि न शक्यते चिकित्सितुम। (पृष्ठ-१११)
१४ यावदहमपि भगवत्सन्देशमनुतिष्ठामि। (पृष्ठ-११२)

उपर्युक्त उदाहरणोमे जो ५ वाँ उदाहरण है। उसमे शाण्डिल्य ने परिव्राजक को गणिका के विषय मे कटाक्ष करते हुए 'अपि' निपात का प्रयोग कीया है।

'अपि' निपात का प्रयोग कभी-कभी विरोध बताने के लिए भी होता है । आप्टेकोष मे भी इस निपात का एक अर्थ यह दीया गया है की एक बात के अतिरिक्त दुसरी बाात बतानी हो तभी अपि का प्रयोग होता है।[6] 'भगवदज्जुकीयम' कृति के आरभमें ही सूत्रधार और विदूषक नाट्यप्रयोग के विषय मे वार्तालाप करते है। सूत्रधार उस दीन 'प्रहसन' का नाट्यप्रयोग करने की बात करता है। तब विदूषक यह कहते हुए 'अपि' का प्रयोग करता है की 'आर्य अहम हास्योऽपि प्रहसनं न जाने।'(पृष्ठ-४७) विदूषक स्वयं को हास्य यानी हसने योग्य बताता है। परंतु इस से विरुध्द वह पहसन नही जानता। अतः यहाँ परस्पर दो विरुध्द बातो को अपि निपात से एक साथ प्रयोग कीया है। इसी तरह गणिका का स्नेह बड़ी दुर्लभ बात है, पर इससे अतिरिक्त गणिका धन क लीए स्नेह करती है।[7] इस बात को कहते हुए परिव्राजक भी विरोधदर्शक 'अपि' का प्रयोग करते है।

इस निपात का प्रयोग किम,कः,कत्र आदि प्रश्नवाचक शब्दो के साथ होता है तब वह 'अनिश्चयात्मक' एसा अर्थ व्यक्त करता है।[8] इस प्रकार प्रश्नवाचक शब्दो के साथ 'अपि' का प्रयोग 'भगवदज्जुकीयम' मे ७ बार हुआ है। एक उदाहरण देखे तो यमपुरुष सर्प का रूप धारणकर गणिका को दंश मारता है तब गणिका कहेती है को 'हम। केनापि दष्टास्मि।'(पृष्ठ-८९) गणिका की इस उक्ति का तात्पर्य यह निकलता है की गणिका उसे दंश मारनेवाले प्राणी के बारे में अज्ञात है। और उस प्राणीकी पहचानके विषय मे कुछ निश्चित कह नही पाती। अतः यहा अनिश्चित अर्थ मे अपि का प्रयोग हुआ है। दिग्ङ्गात्रदर्शिनी टीका के टीकाकार भी इस संदर्भ मे कहेते है की 'दष्टुर्जन्तोरदृश्यत्वात कनापित्युक्तम।'(पृष्ठ-८९) अथात अदृश्य होकर दंश देने वाले प्राणी के लिए 'केनापि' कहा है। इस प्रकार 'अपि' निपात पयोग के अन्य उदाहरण निम्नोक्त है।

१ न शक्यमशिक्षितेन किञ्चिदपि ज्ञातम। (पृष्ठ-४७)
२ नहि शरीर विनास्ति किमपि। (पृष्ठ-६४)
३ नर इति कृतसज्ञः कोऽप्यहं प्राणिधमा। (पृष्ठ-६५)

४ परिव्राजकः- अस्ति किञ्चिदपि ज्ञातम। (पृष्ठ-७९)
५ पायसे घृतप्रक्षिप्तमिवातिमधुरः कोऽपि गीतरवः। (पृष्ठ-८४)
६ शरीरडेन्येन केनापि सत्वयुक्तन घर्षिता। (पृष्ठ-१०२)

'अपि' निपात का प्रयोग अन्य अव्ययपदो के साथ हुआ हो एसे ४ उदाहरण भगवदज्जुकीयम मे इस प्रकार प्राप्य है। कृति के प्रारंभ मे परिव्राजक दो बार शाण्डिल्य को पुकारते ह[9] परन्तु शाण्डिल्य बहुत पीछे रह जाने के कारण परिव्राजक को सन नहीं पाता। अतः परिव्राजक उसे फिर से पुकारते हुए कहते है की "पुनरपि समाह्वानं करिष्ये। शाण्डिल्य। शाण्डिल्य।" (पृष्ठ-४९) इस उक्ति मे प्रयुक्त 'अपि' प्रथमदृष्टिसे समुच्चय अर्थ को प्रगट करता लगता है। परन्तु आप्टेकोष मे 'पुनरपि' इस पदके अर्थ दीए गए है,'फिर, एक बार और, इसके विपरित'[10] अब इन अर्थो को ध्यान मे लेकर देखे तो परिव्राजक जब प्रथम बार शाण्डिल्य को पुकारते है तब उसे अंधकार मे गीरा हुआ,बल,रुप और योवन के दोषो को नही देखनेवाला कहते है। परंतु इन सबके बावजुद इनके विपरित वह उसे निदोष कहकर फिर से पुकारते है। अतः यहां विरोधाभास बतत हुए भी अपि निपात का प्रयोग हुआ है।

'अपि' निपात का प्रयोग कभी-कभी शँका व्यक्त करने के लिए भी होता है।[11] उद्यान मे रामिलक की प्रतिक्षा करते हुए गणिका वसन्तसेना चेटी मधुकरिका से रामिलक के आने मे विलंब होने के बारे मे चर्चा करती है तब मधुकरिका रामिलक गोष्ठी मे गए होने की बात करती है तुरंत ही वसन्तसेना शंका व्यक्त करती है की "इदानीमपि न पर्याप्ता गोष्ठी।"(पृष्ठ-८२) गणिका के इस प्रश्न मे 'अपि' निपात से शंका का अर्थ अभिप्रेत है। अपि निपात कभी कभी प्रश्नार्थ का सूचक भी होता है।[12] 'भगवदज्जुकीयम' मे भी दो स्थानो पर 'अपि' निपात प्रश्नार्थ सूचक प्राप्त होता है।

१ शाण्डिल्यः - ईहाप्यध्ययनम। (पृष्ठ-९९)
२ गणिका - शास्त्रमप्यस्ति। (पृष्ठ-१०८)

'अपि' निपात कभी-कभी "भी, अति या बहुत" के अर्थ पर बल देने के लिए भी प्रयुक्त होता है।[13] एसा एक संदर्भ प्रस्तुत कृति मे प्राप्त होता है। शाण्डिल्य प्रातराश के लोभ से शाक्यश्रमणक बना है धर्म लोभ से नही। परिव्राजक उसे शाक्यश्रमणक बनने के दौरान सीखा हुआ कुछ याद होने का प्रश्न पुछते है। तब शाण्डिल्य उत्तर देता है की "प्रभुतम्प्यस्ति।" (पृष्ठ-७९) प्रभुतम का अर्थ ही है 'बहुत'। परंतु चंचल शाण्डिल्य अपने ज्ञान की विपुलता बताने के लिए 'अपि' निपात का प्रयोग करता है की उसे बहुत कुछ याद है।

'भगवदज्जुकीयम' मे एक स्थान पर 'अपि' निपात विशेष अर्थ मे प्रयुक्त हुआ है। इस स्थान पर 'अपि' निपात का अर्थ टीकाकार ने 'निश्चयात्मक' कीया है। यह प्रसंग कुछ इस प्रकार है- कृति के आरंभ मे शाण्डिल्य परिव्राजक को आत्मा और कर्मात्मा क्या है इस बारे में पच्छा करता है। तब परिव्राजक आत्मा- कर्मात्मा का स्वरुप समजाते हुए कहते है की- 'यः स्वप्ने गगनमुपैति सोऽन्तरात्मा सोऽप्यात्मा विधिविहितं प्रयाति यश्च।' (पृष्ठ-६३) यहां 'अपि' निपात के पूर्व और पश्चात के दोनो विधानो मे 'आत्मा' की ही बात की गई है। अतः यहा 'अपि' निपात प्रथमतया समुच्चय अर्थ मे प्रयुक्त लगता है। परन्तु टीकाकार इसका अर्थ देते हुए कहते है की 'सोऽपि स एव, अपि शब्द एवार्थे।'(पृष्ठ-६३) अर्थात यहां प्रथम विधान मे जो स्वप्न मे उपर आकाश मे जाता है वह आत्मा है यह कहने के बाद आत्मा के वर्णन को आगे बढाते हुए जो विधि के विधान के अनुसार जो कुछ (स्वर्ग-नर्क आदी) प्राप्त करता है वह ही आत्मा है एसा निश्चित करने के लिए 'अपि' निपात प्रयुक्त हुआ है एसा टीकाकार का मत है।

इस तरह उपर्युक्त चर्चा में हमने पाया की 'अपि' निपात के अनेक अर्थ है। आगे पीछे के संदर्भ, अन्य अव्ययो के साथ प्रयोग आदि के कारण उसके अर्थो म परिवर्तन पाए जाते है। प्रस्तुत कृति मे भी 'अपि' निपात समुच्चय, विरोध, शंका, प्रश्नार्थ, अनिश्चिता, अतिरिक्त, अधिकता, निश्चय आदि अर्थो मे प्रयुक्त हुआ है। लेख के आरम्भ में ही चर्चा हुई थी की वैदिक साहित्य छन्दोबद्ध होने के कारण कभी-कभी निपातो का प्रयोग केवल पादपुरक रूपमे होता है। परन्तु लौकिक साहित्य, की जहा छन्द या पाद की मर्यादा नही है वहां निपात ज्यादातर अर्थयुक्त ही होते है। इसी सन्दर्भ मे यहां 'अपि' निपात के अर्थ देने का प्रयत्न कीया गया है।

संदर्भः

1 यास्कप्रणीतं निरुक्तम। (पृष्ठ-७०)
2 वही.
3 वही.
4 अष्टाध्यायी (प्रथम भाग।) (पृष्ठ-२०४)
5 गर्हा- समुच्च्य-प्रश्न-शंका-संभावनास्वपि। (३-३-२४९) अमरकोष। (पृष्ठ-४८०)
6 संस्कृत हिन्दी शब्दकोष। (पृष्ठ-७६)
7 दुर्लभस्नेहोऽपि भुयोऽर्थयोगात स्निह्यतीति युक्तम। (पृष्ठ-९४)
8 संस्कृत हिन्दी शब्दकोष। (पृष्ठ-७६)
9 परिव्राजकः- शाण्डिल्य। शाण्डिल्य। (पृष्ठतो विलोक्य) न तावत दृश्यते। (पृष्ठ-४८)
10 संस्कृत हिन्दी शब्दकोष। (पृष्ठ-६६३)
11 अमरकोष। (पृष्ठ-४८०)
12 संस्कृत हिन्दी शब्दकोष। (पृष्ठ-७६)
13 वही

सन्दर्भ पुस्तकेः-

१ अमरकोष
२ अष्टाध्यायी (प्रथम भाग।)
३ भगवदज्जकीयम।
४ यास्कप्रणीतं निरुक्तम।
५ संस्कृत हिन्दी शब्दकोष।

****

सोनिया बी. पटेल
पीएच.डी. स्टुडन्ट
गुजरात युनिवर्सिटी

Copyright © 2012- 2016 KCG. All Rights Reserved. | Powered By : Knowledge Consortium of Gujarat